



अध्याय १०

## विभूति योग



श्रीभगवानुवाच ।  
भूय एव महाबाहो शृणु मे परमं वचः ।  
यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया ॥ १०-१ ॥

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा - हे महाबाहु, एक बार पुनः इन परम उपदेशों को सुनो। क्योंकि मैं तुम्हारा हित चाहता हूँ, और तुम मुझे अत्यंत प्रिय हो, इसलिए मैं इन उपदेशों को तुम्हें बताता हूँ।

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः ।  
अहमादिहि देवानां महर्षीणां च सर्वशः ॥ १०-२ ॥

न देवताओं को और न महर्षियों को मेरे उद्गम का पता है। वास्तव में, मैं ही देवताओं एवं ऋषि मुनियों की उत्पत्ति का मूल-कारण हूँ।

यो मामजमनादिंच वेत्ति लोकमहेश्वरम् ।  
असम्मूढः स मत्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १०-३ ॥

जो मुझे जन्महीन, अनादि, तथा दुनिया के सर्वोच्च नियंत्रक के रूप में जानता है, वह नश्वरों में भ्रांति-विहीन है, और सभी कर्मों से मुक्त है।

~ अनुवृत्ति ~

श्रीकृष्ण अज्ञात हैं और ज्ञानातीत हैं। वे अधोक्षज हैं - इन्द्रियों की पहुँच से परे, मन और बुद्धि की समझ से परे। अपने बल पर जीवित प्राणी चाहे कितना भी प्रयास करें, वे श्रीकृष्ण तक कभी नहीं पहुँच सकते, किंतु श्रीकृष्ण स्वयं चाहें तो तुरंत ही उनके सामने प्रकट हो सकते हैं। हालांकि श्रीकृष्ण ही उनके उत्पत्ति का कारण हैं, तब भी देवतागण तथा ब्रह्मा, इंद्र, सनक, दुर्वासा, मरीचि आदि जैसे महान ऋषि मुनि भी श्रीकृष्ण को अपने स्वयंरूप में नहीं जानते। लेकिन जो श्रीकृष्ण के भक्त हैं, भक्ति-योगी हैं, वे श्रीकृष्ण को हृदय की गहराई में स्थित परम पुरुष के रूप में जानते हैं।

स वै पुंसां परो धर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे ।  
अहैतुक्यप्रतिहता ययात्मा सुप्रसीदति ॥

मानव जाति का सर्वोच्च धर्म वही है जिसके द्वारा हम, इन्द्रियों की ज्ञाति से परे - अधोक्षज, परम पुरुष (भगवान् श्रीकृष्ण) के प्रति भक्ति प्राप्त कर सकें।

## श्रीमद्भगवद्गीता

ऐसे भक्ति-योगी की भक्ति हेतु रहित एवं अविच्छिन्न होनी चाहिए जिससे संपूर्ण आत्म-संतुष्टि प्राप्त होती है। (श्रीमद्भागवतम् १.२.६)

श्रीकृष्ण सृष्टि के रचयिता और सभी के उत्पत्ति के कारण हैं, लेकिन वे स्वयं अजन्मे हैं। फिर भी, जब कृष्ण पृथ्वी पर प्रकट होते हैं, जैसा कि उन्होंने लगभग ५००० साल पहले भगवद्गीता का ज्ञान देने के लिए किया था, वह अपने भक्तों वासुदेव तथा देवकी को अपने माता पिता के रूप में स्वीकार करते हैं, और ऐसे प्रकट होते हैं जैसे प्रत्येक दिन की शुरुआत में सूर्य समुद्र से प्रकट होता है। कृष्ण ने वासुदेव के हृदय में पहले स्वयं को प्रकट किया और फिर स्वयं को देवकी के हृदय में स्थानांतरित कर लिया। वहां, उनके हृदय से वे इस संसार में प्रकट हुए। यह अकल्पनीय है, हमारी इन्द्रियों के समझ से बाहर है, लेकिन कृष्ण बिना जन्म लिए ही इस जगत में आते हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता के महान भाष्यकार श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर कहते हैं कि श्रीकृष्ण का नित्य अजन्मा होना और उसी समय उनका जन्म लेना, उनके अचिन्त्य शक्ति के कारण ही संभव होता है। यदि कृष्ण अचिन्त्य न होते तो वे परम पुरुष भगवान् ही न होते। श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर इस बात की पुष्टि करते हैं कि जो इस बात को समझता है वह कभी भी मोहग्रस्त नहीं होता है और सभी कर्मों से मुक्त है।

बुद्धिर्ज्ञानमसम्मोहः क्षमा सत्यं दमः शमः ।  
सुखं दुःखं भवोऽभावो भयं चाभयमेव च ॥ १०-४ ॥  
अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः ।  
भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः ॥ १०-५ ॥

बुद्धिमत्ता, ज्ञान, ऋग से मुक्ति, सहिष्णुता एवं क्षमाभाव , सत्यता, आत्म-नियंत्रण, सुख, दुःख, जन्म, मृत्यु, भय और निर्भयता, अहिंसा, समभाव, संतुष्टि, तपस्या, दानशीलता, यश और अपयश - ये सभी जीवों की विविध अवस्थाएं मेरे ही द्वारा उत्पन्न होती हैं।

मर्ष्यः सप्त पूर्वं चत्वारो मनवस्तथा ।  
मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः ॥ १०-६ ॥

सप्तर्षिगण, चार कुमार और मनु, जिनके द्वारा इस संसार के सभी प्राणी अवतारित हुए हैं, ये सभी मेरे मन से प्रकट हुए हैं।

एतां विभूति योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः ।  
सोऽविकल्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः ॥ १०-७ ॥

जो मेरे वैभव, ऐश्वर्य एवं योग के तत्त्व को जानता है, वह अविकल्प रूप से मेरे साथ एक हो जाता है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

~ अनुवृत्ति ~

हालांकि, अच्छा व बुरा, सुख और दुःख, यश व अपयश आदि, सबकुछ श्रीकृष्ण से ही उत्पन्न होते हैं, किंतु इसका तात्पर्य जीवन के भाग्यवादी दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करने के लिए नहीं है। भक्ति-योगी को अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों के बीच अंतर करने के लिए अपनी बुद्धि का उपयोग करने की अनुशंसा की जाती है। जो भक्ति-योग के लिए अनुकूल है उसे स्वीकार करें और जो प्रतिकूल है उसे अस्वीकार करें।

आनुकूल्यस्य संकल्पः प्रातकूल्यस्य वर्जनम् ।

हमे उन चीजों को स्वीकार करना चाहिए जो भक्ति के अनुकूल हैं और उन चीजों को अस्वीकार करना चाहिए हैं जो भक्ति के प्रतिकूल हैं। (हरि-भक्ति-विलास ११.४१७)

सप्तर्षियों में मरीचि, भृगु, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ हैं। चार कुमार सनक, सनातन, सनंदन और सनत्कुमार हैं। ब्रह्मा के एक दिन में चौदह मनु होते हैं। ये मनु मानव जाति के प्रजनक हैं जो सारे ब्रह्मांड में जीवन को आबाद करते हैं। ये सभी व्यक्तित्व कृष्ण के मन से उत्पन्न होते हैं और भौतिक जगत में ब्रह्मा के पुत्र के रूप में प्रकट होते हैं।

ये सभी अद्भुत लीलाएं हैं जो सामान्य लोग समझ नहीं सकते। केवल श्रीकृष्ण के सबसे गोपनीय (अनन्य) भक्त ही उनके वास्तविक स्वभाव को समझ सकते हैं। ऐसा योगी द्विविधता से मुक्त होता है, श्रीकृष्ण के साथ सदैव जुड़ा होता है और सभी चीजों में उन्हें पूर्ण सत्य के रूप में देखता है। श्रीकृष्ण हमें आश्वासन देते हैं कि इसमें कोई संदेह नहीं।

## श्रीमद्भगवद्गीता

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते ।  
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः ॥ १०-८ ॥

मैं सभी वस्तुओं का स्रोत हूँ। सभी वस्तुएं मुझ से ही उद्भूत होते हैं। यह समझकर, बुद्धिमान व्यक्ति जिन्हें मेरा प्रेम प्राप्त है वे हृदय से मेरी पूजा करते हैं।

मच्चित्ता मद्भूतप्राणा बोधयन्तः परस्परम् ।  
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥ १०-९ ॥

जो सदैव मेरा चिन्तन करते हैं, जिन्होंने अपना सारा जीवन मेरे लिए समर्पित कर दिया है, वे परस्पर एक दूसरे को मेरे ज्ञान से आलोकित करते हैं तथा मेरे विषय में बातें करते हुए परम संतोष तथा आनन्द का अनुभव करते हैं।

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ।  
ददामि बुद्धियोगंतं येन मामुपयान्ति ते ॥ १०-१० ॥

जो सदैव मुझ पर समर्पित हैं और प्रेम पूर्वक मुझे पूजते हैं, मैं सदा उन्हें भक्तिपूर्ण प्रेरणा प्रदान करता हूँ, जिससे कि वे मेरे पास आ सकें।

तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः ।  
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता ॥ १०-११ ॥

मैं उन पर विशेष कृपा करने हेतु उनके हृदय में प्रकट होकर ज्ञान के प्रकाशमान चिराग द्वारा अज्ञानजन्य अंधकार को दूर करता हूँ।

~ अनुवृत्ति ~

कहा गया है कि इस अध्याय के श्लोक ८ से लेकर श्लोक ११ तक में, श्रीमद्भागवद्गीता का तात्त्विकि सिद्धान्त निहित है। यहां, श्री कृष्ण स्थापित करते हैं, कि वे स्वयं ही भौतिक और आध्यात्मिक जगत के स्रोत हैं, एवं ब्रह्मन व परमात्मा की उत्पत्ति के कारण हैं। “सर्वस्य” शब्द के उपयोग से, श्रीकृष्ण प्रमाणित करते हैं कि वे स्वयं वैकुण्ठ के नारायण के भी स्रोत हैं (जो सभी शक्तियों के स्वामी हैं)।

देवताओं के समूह में, हम यह पाते हैं की ब्रह्माजी सत्य-लोक के स्वामी हैं, शिवजी शिव-लोक के स्वामी हैं, इन्द्रजी इन्द्र-लोक के स्वामी हैं, परन्तु कहीं

भी हम यह नहीं पाते हैं कि कोई भी व्यक्ति/देव सभी के स्वामी एवं उत्पत्ति के कारण (स्रोत) हैं, सिवाय श्रीकृष्ण के। यह समझ कि श्री कृष्ण सर्वस्व हैं, बुद्धिमानों को श्री कृष्ण की हृदय से प्रेमपूर्वक पूजा करने के लिए प्रेरित करता है।

श्री कृष्ण कहते हैं, मत-चित्ता - सदैव मेरा चिन्तन करें एवं मेरा ध्यान करें; मद्-गत-प्राणा - अपना जीवन मुझ पर समर्पित करें। बुद्धिमान व्यक्तियों की संगत में मेरी चर्चा में संलग्न होकर (कथयन्त), एक दूसरे को अनुप्राणित एवं ज्ञान से आलोकित करें (बोधयन्त)। यही मन और इंद्रियों के लिए उचित ध्यान और कार्य है।

कृष्ण के बारे में चर्चा को कृष्ण-कथा या श्रवण और कीर्तन कहते हैं। इसका अर्थ श्रीमद्भगवद्गीता, श्रीमद्भागवतम् और ऐसे अन्य साहित्यों का श्रवण एवं पाठ करना और संकीर्तन करना, यानी की महा-मंत्र का सामूहिक जाप करना -

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे  
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे

श्रीकृष्ण के नाम और क्रियाकलापों का श्रवण और जाप करना ही योग की सर्वोच्च पद्धति है। कृष्ण पद्म-पुराण में पुष्टि करते हैं कि जहां भी उनके नाम का जप होता है वे वही निवास करते हैं।

नाहं तिष्ठामि वैकुण्ठे योगिनां हृदयेषु वा ।  
तत्र तिष्ठामि नारद यत्र गायन्ति मद् भक्ताः ॥

न ही मैं वैकुण्ठ में बसता हुँ, न ही कनिष्ठ योगियों के हृदय में। मैं वहीं वास करता हुँ, जहां मेरे भक्त मेरी क्रियाकलापों का महिमामंडन करते हैं तथा मेरा नाम जपते हैं। (पद्म-पुराण)

कुल मिलाकर, कृष्ण की भक्ति में स्वयं को पूरी तरह से संलग्न करने के लिए भक्ति-योग में नौ प्रक्रियाएँ हैं। इनमें से, श्रवण और कीर्तन सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण हैं -

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पाद्-सेवनम् ।  
अर्चनं वन्दनं दास्यं सर्व्यमात्मनिवेदनम् ।  
इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्वेन नव-लक्षणा ॥

महा-मंत्र और विष्णु या कृष्ण की लीलाओं का श्रवण एवं कीर्तन करना, उनका स्मरण करना, उनके चरण-कमलों की सेवा करना, उनकी आदरपूर्वक पूजा करना, उनका सेवक बनना, उन्हें अपना सबसे प्रिय मित्र मानना, और अपना सर्वस्व उन पर समर्पण कर देना। इन नौ प्रक्रियाओं को भक्ति-योग के रूप में स्वीकार किया जाता है। (श्रीमद्भागवतम् ७.५.२३) ।

श्लोक १० में प्रीति-पूर्वकम् शब्द का उपयोग हुआ है। प्रीति का अर्थ है प्रेम, लेकिन इस प्रेम को इस भौतिक संसार में बद्ध-जीवों के बीच साझा किए जाने वाले प्यार और स्नेह के साथ मिलाकर अपनी समझ को उलझाना नहीं चाहिए। “प्रीति” ऐसी शुद्ध-स्नेह की स्थिति है जिसमें स्वार्थ या सांसारिक वासनाओं की कोई अभिव्यक्ति नहीं देखी जाती। श्रीकृष्ण को पूजने के लिए इस तरह के प्रेम की आवश्यकता होती है और ऐसा प्रेम ही उनके साथ एक शाश्वत बंधन प्राप्त करने की कुंजी है। जिन लोगों को भक्ति-योग द्वारा श्रीकृष्ण के लिए ऐसा प्रेम प्राप्त है, वे लगातार उनके द्वारा शुद्ध भक्ति (बुद्धी-योग) की प्रेरणा से सशक्त होते हैं, जिससे वे उनके (श्रीकृष्ण) पास आ सकते हैं।

श्रीकृष्ण, परमात्मा (परम चेतना) के रूप में सभी जीवों के हृदय में बसते हैं, और उनके संसार में भ्रमण का निर्देशन करते हैं। जब कोई कृष्ण को जानने, कृष्ण की सेवा करने और उनके साथ एक शाश्वत संबंध में प्रवेश करने की इच्छा रखता है, तो उनके लिए करुणा के कारण, कृष्ण व्यक्तिगत रूप से उनके हृदय में प्रकट होते हैं और ज्ञान के रोशन चिराग द्वारा अज्ञान से पैदा हुए अंधकार को नष्ट कर देते हैं। यह कहा गया है कि श्रीकृष्ण प्रकाश हैं और अज्ञान अंधकार है -

कृष्ण-सूर्य-सम माया हय अन्धकार ।  
याहां कृष्ण ताहां नाहि मायार अधिकार ॥

कृष्ण की तुलना सूर्य से की जाती है और माया (अज्ञान) अंधेरे की तरह है। जहां भी कृष्ण हैं वहां कभी अंधेरा नहीं हो सकता। (चैतन्य चरितामृत, मध्य-लीला २२.३१)

जब भी रोशनी दिखाई देती है वहां अंधेरा परास्त हो जाता है। इस प्रकार, जब कृष्ण व्यक्तिगत रूप से भक्ति-योगी के हृदय में प्रकट होते हैं, तो सभी

## अध्याय १० – विभूति योग

अंधकार और निराशा गायब हो जाते हैं, और एक अति प्रबुद्ध हो जाता है। यह भगवद्गीता का सारांश है।

अर्जुन उवाच ।  
परं ब्रह्म परंधाम पवित्रं परमं भवान् ।  
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम् ॥ १०-१२ ॥  
आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षि रदस्तथा ।  
असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे ॥ १०-१३ ॥

अर्जुन ने कहा - आप सर्वोच्च ब्रह्मन (ब्रह्म-ज्योति) हैं, सर्वोच्च आश्रय हैं, और सबसे पवित्र हैं। आप शाश्वत परम पुरुष हैं, सबसे दिव्य हैं, मौलिक दैवत्व हैं, अजन्मे तथा सर्वव्यापी हैं। सभी ऋषियों जैसे कि नारद, असित, देवल और व्यास ने यही कहा है, जैसे की आपने मुझे बताया है।

सर्वमेतद्वतं मन्ये यन्मां वदसि केशव ।  
न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः ॥ १०-१४ ॥

हे केशव! आपने मुझसे जो कुछ कहा है, उसे मैं पूर्णतया सत्य मानता हूँ। हे प्रभु! न तो देवतागण न ही असुरगण आपके व्यक्तित्व को पूरी तरह से समझ सकते हैं।

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम ।  
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते ॥ १०-१५ ॥

हे परमपुरुष! हे सबके उद्गम, हे समस्त प्राणियों के स्वामी, हे देवों के देव, हे जग के स्वामी! केवल आप ही अपने स्वयं को वास्तव में जानते हैं।

वकुर्मर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः ।  
याभिविभूतिभिलोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि ॥ १०-१६ ॥

कृपा करके विस्तारपूर्वक आप अपनी दिव्य शक्तियों का मुझसे वर्णन करें जिनके द्वारा आप समस्त लोकों में व्याप्त हैं।

कथं विद्यामहं योगिस्त्वां सदा परिच्छिन्तयन् ।  
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया ॥ १०-१७ ॥

## श्रीमद्भगवद्गीता

हे समस्त योग शक्तियों के स्वामी! मैं किस तरह आपका निरन्तर चिन्तन कर सकता हूँ, आपको मैं कैसे जानू और आप पर ध्यान कैसे करूँ?

विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिंच जनार्दन ।  
भूयः कथय तृप्तिर्हि शृणुतो नास्ति मेऽमृतम् ॥ १०-१८ ॥

हे जनार्दन, कृपया मुझे अपनी योग शक्तियों और विभूतियों के बारे में विस्तार से बताएं। आपके विषय पर अमृत वचनों के श्रवण से मैं कभी तृप्त नहीं होता हूँ।

~ अनुवृत्ति ~

अर्जुन ने वह सब स्वीकार कर लिया जो श्रीकृष्ण ने कहा और वे कहते हैं कि केवल कृष्ण ही वास्तव में स्वयं को जानते हैं। परम सत्य अनंत है और अर्जुन जैसे जीव, परिमित हैं, इसलिए वे स्वाभाविक रूप से कृष्ण के वैभव को समझने में असमर्थ हैं। फिर भी अर्जुन के लिए इस तरह के वैभव को सुनना ध्यान करने के लिए एक अच्छी आध्यात्मिक प्रेरणा है।

अर्जुन श्रीकृष्ण को योगी (योग शक्तियों के स्वामी) कहकर संबोधित करते हैं, और उनसे पूछते हैं कि वे उनका ध्यान किस तरह करें। इस अध्याय के शेष श्लोकों में श्रीकृष्ण यह बताते हैं कि किस प्रकार उन पर ध्यान करना चाहिए। लेकिन अंतिम श्लोक में श्री कृष्ण यह निष्कर्ष निकालते हैं कि उनके अप्रत्यक्ष या अमूर्त रूप पर ध्यान की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि उनके केवल एक अंश से ही वे सारे जगत को आधार प्रदान करते हैं। अतएव, श्रीकृष्ण अर्जुन को इंगित करते हैं कि उनके व्यक्तिगत रूप पर ध्यान करना ही सर्वश्रेष्ठ ध्यान की प्रक्रिया है।

श्रीभगवानुवाच ।  
हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः ।  
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे ॥ १०-१९ ॥

भगवान् श्री कृष्ण ने कहा - सुनो, हे कुरु वंश के सर्वश्रेष्ठ, मेरी शक्तियां एवं ऐश्वर्य असीम हैं, इनकी सीमा का कोई अंत नहीं है, किंतु मैं तुमसे केवल अपने उन दिव्य वैभवों का वर्णन करता हूँ जो सबसे प्रधान हैं।

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः ।  
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च ॥ १०-२० ॥

## अध्याय १० – विभूति योग

हे अज्ञान की निद्रा के विजयी, अर्जुन! मैं समस्त जीवों के हृदयों में स्थित परमात्मा हूँ। मैं ही समस्त जीवों का आदि, मध्य तथा अन्त हूँ।

**आदित्यानामहं विष्णुज्योतिषां रविरंशुमान् ।  
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी ॥ १०-२१ ॥**

मैं आदित्यों में विष्णु, ज्योतियों में तेजस्वी सूर्य, मरुतों में मरीचि, तथा नक्षत्रों में चन्द्रमा हूँ।

**वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः ।  
इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना ॥ १०-२२ ॥**

मैं वेदों में सामवेद हूँ, देवों में इन्द्र हूँ, इन्द्रियों में मन हूँ, तथा समस्त जीवों की जीवनशक्ति या चेतना हूँ।

**रुद्राणां शङ्करश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम् ।  
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् ॥ १०-२३ ॥**

मैं रुद्रों में शिव हूँ, यक्षों तथा राक्षसों में कुबेर हूँ, वसुओं में अग्नि हूँ, और पर्वतों में मेरु हूँ।

**पुरोधसांच मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम् ।  
सेनानीनामहं स्कन्दः सरसामस्मि सागरः ॥ १०-२४ ॥**

हे पार्थ! पुरोहितों में मुझे मुख्य पुरोहित ब्रहस्पति जानो। मैं सेनानायकों में कार्तिकेय हूँ, एवं जलाशयों में समुद्र हूँ।

**महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्येकमक्षरम् ।  
यज्ञानांजपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः ॥ १०-२५ ॥**

महर्षियों में मैं भृगु हूँ, वाणी में दिव्य ओंकार (ॐ) हूँ, यज्ञों में जप हूँ, तथा अचलों में हिमालय हूँ।

**अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः ।  
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥ १०-२६ ॥**

समस्त वृक्षों में मैं अश्वत्थ हूँ। देवर्षियों में नारद हूँ। मैं गन्धों में चित्ररथ हूँ, और सिद्धों में कपिल मुनि हूँ।

## श्रीमद्भगवद्गीता

उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम् ।  
ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम् ॥ १०-२७ ॥

अश्वों में मुझे उच्चैःश्रव जानो, जो समुद्र मन्थन के समय उत्पन्न हुआ था। गजों में मैं गजराज ऐरावत हूँ, तथा मनुष्यों में राजा हूँ।

आयुधानामहं वनं धेनूनामस्मि कामधुक् ।  
प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः ॥ १०-२८ ॥

आयुधों में मैं वज्र हूँ, गायों में कामधेनु हूँ। प्रजनकों में कामदेव, तथा सों में वासुकि हूँ।

अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम् ।  
पितृणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम् ॥ १०-२९ ॥

नागलोक के नागों में मैं अनन्त हूँ, और जलचरों में मैं वरुणदेव हूँ। पितरों में मैं अर्यमा हूँ, तथा दण्ड-दायकों में मैं यम हूँ।

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां कालः कल्यतामहम् ।  
मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम् ॥ १०-३० ॥

मैं दैत्यों में प्रह्लाद हूँ, प्रतिबंधो में काल हूँ। मैं पशुओं में सिंह हूँ, तथा पक्षियों में गरुड हूँ।

पवनः पवतामस्मि रामः शश्वभृतामहम् ।  
झृषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्वी ॥ १०-३१ ॥

शुद्ध करनेवालों में मैं वायु हूँ। शश्व चलाने वालों में मैं राम हूँ। जलजन्तुओं में मैं मकर, और नदियों में गंगा हूँ।

सर्गाणामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन ।  
अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम् ॥ १०-३२ ॥

हे अर्जुन! मैं समस्त सृष्टियों का आदि, मध्य और अन्त हूँ। मैं विद्याओं में अध्यात्म विद्या हूँ, और तर्कशास्त्रियों में मैं निर्णायक सत्य हूँ।

अक्षराणामकारोऽस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च ।  
अहमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखः ॥ १०-३३ ॥

मैं अक्षरों में अकार हूँ, और समासों में द्वन्द्व समास हूँ। मैं ही काल की निरंतर धारा हूँ, और स्रष्टाओं में ब्रह्मा हूँ।

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम् ।  
कीर्तिः श्रीर्वाङ्क नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा ॥ १०-३४ ॥

मैं सर्वभक्षी मृत्यु हूँ, और मैं हि भविष्य के प्रकट होने का कारण हूँ। स्त्रियों में मैं कीर्ति, श्री, वाक्, स्मृति, मेधा, धृति तथा क्षमा हूँ।

बृहत्साम तथा साम्रां गायत्री छन्दसामहम् ।  
मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः ॥ १०-३५ ॥

सामवेद के स्तुतियों में मैं बृहत्साम हूँ, और वैदिक छन्दों में मैं गायत्री हूँ। मासों में मैं मार्गशीर्ष तथा ऋतुओं में फूल खिलने वाली वसन्त ऋतु हूँ।

द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ।  
जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम् ॥ १०-३६ ॥

छलियों की मैं द्यूतक्रीड़ा हूँ, और तेजस्वियों का तेजस हूँ। मैं विजय एवं साहस हूँ और बलवानों का बल हूँ।

वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनञ्जयः ।  
मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशना कविः ॥ १०-३७ ॥

वृष्णिवंशियों में मैं वासुदेव और पाण्डवों में अर्जुन हूँ। मैं मुनियों में व्यास मुनि तथा महान विचारकों में उशना कवि हूँ।

दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम् ।  
मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहम् ॥ १०-३८ ॥

मैं दण्ड देनेवालों का दण्ड हूँ। विजय के आकांक्षियों की मैं नीति हूँ। रहस्यों में मैं मौन हूँ, और ज्ञानियों का ज्ञान हूँ।

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन ।  
न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् ॥ १०-३९ ॥

हे अर्जुन! मैं समस्त जीवित-प्राणियों का जनक बीज हूँ। अस्तित्व में ऐसा कोई चर या अचर वस्तु नहीं जो मेरे बिना अस्तित्वमान हो।

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप ।  
एष तृदेशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया ॥ १०-४० ॥

हे परन्तप! मेरी दिव्य विभूतियां असंख्य हैं। मैंने तुमसे केवल उदाहरण के लिए अपने अनन्त विभूतियों के मात्र एक अंश का वर्णन किया है।

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमद्भूर्जितमेव वा ।  
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोऽशसम्भवम् ॥ १०-४१ ॥

जानो कि जो भी ऐश्वर्य युक्त, सुन्दर तथा तेजस्वी सृष्टियां अस्तित्व में हैं, मेरे ही शक्ति के एक अंश मात्र से ही उद्भूत हुए हैं।

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।  
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥ १०-४२ ॥

किन्तु हे अर्जुन! यह सब जानने की आवश्यकता क्या है? मेरे एक अंश मात्र से ही यह सम्पूर्ण जगत् आधारित है।

~ अनुवृत्ति ~

उपरोक्त श्लोकों में श्रीकृष्ण ने कहा है कि संसार की सभी वैभवपूर्ण और अद्भुत चीजें उन्हीं को दर्शाती हैं। श्रीकृष्ण ऐसा इसलिए कहते हैं, ताकि हम यह समझ सकें कि इस भौतिक जगत् में जो भी प्रसिद्ध, सुन्दर और गौरवशाली है वह केवल उन्हीं से उत्पन्न हुआ है। कृष्ण के वैभव अपार हैं, परन्तु अंततः कृष्ण कहते हैं कि जब परम सत्य उनके सामने उपस्थित है, तो अर्जुन को अप्रत्यक्ष तत्त्व पर ध्यान करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसलिए, कृष्ण अर्जुन को सुझाव देते हैं कि वह उनके इस प्रत्यक्ष रूप का ही ध्यान करें।

श्रीकृष्ण का कोई ऐसा रूप नहीं है जो कुरुक्षेत्र में अर्जुन के सामने उपस्थित रूप से श्रेष्ठ है, केवल उनके उस रूप को छोड़कर जब वह यमुना नदी के किनारे

## अध्याय १० – विभूति योग

वृंदावन के कुंज वनों में एक युवा के रूप में, तिरछी दृष्टि से देखते हुए, हाथों में अपनी बांसुरी लिए, और तीन जगहों पर बांके हुए अपनी दिव्य स्वरूप में दिखते हैं।

स्मेरां भङ्गी-त्रय-परिचितं साचि-विस्तीर्ण-दृष्टिम् ।  
वंशी-न्यस्ताधर-किशलयाम् उज्ज्वलां चन्द्रकेण ॥  
गोविन्दारब्यां हरि-तनुमितः केशि-तीर्थोपकण्ठे ।  
मा प्रेक्षिष्ठास् तव यदि सखे बन्धु-सङ्गेऽस्ति रङ्गः ॥

हे मित्र, यदि आपको इस जगत में अपने सहयोगी बंधुओं से लगाव है, तो गोविन्दजी की मोहक मुस्कान का अवलोकन न करें, जब वे केशी-घाट में यमुना के तीर पर खड़े होते हैं। वे अपनी तिरछी दृष्टि से देखते, अपनी बांसुरी को अपने होठों पर रखते हैं, जिनकी तुलना ताजा खिलते कलियों से की जाती है। तीन स्थानों पर बांका हुआ उनका दिव्य शरीर, चंद्रमा के प्रकाश में अत्यंत उज्ज्वलित दिखाई देता है। (भक्ति-रसामृत-सिंधु १.२.२३९)

श्रीकृष्ण, ५२३७ साल पहले वृंदावन, भारत, में प्रकट हुए थे और अपने निजी भक्तों के साथ एवं भक्ति-योग के माध्यम से परम-सिद्ध हुए भक्तों के साथ उन्होंने अपनी लीला प्रदर्शित की थी। वृंदावन में श्रीकृष्ण की लीलाएं श्रीमद्भागवतम् के दसवें काण्ड में दर्ज किया गया है जो पिछले पचास सदियों से भक्ति-योग के साधकों को प्रेरित करता आ रहा है।

भगवद्गीता के अंतिम अध्याय में श्रीकृष्ण अर्जुन को सूचित करते हैं कि जो कोई भी उन पर आत्मसमर्पण करता है, उसे परम धाम गोलोक वृंदावन प्राप्त होगा।

ॐ तत्सदिति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां  
वैयासिक्यां भीष्मपर्वाणि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु  
ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे  
विभूतियोगो नाम दशमोऽध्यायः ॥

ॐ तत् सत् – अतः व्यास विरचित शतसहस्र श्लोकों की श्री महाभारत ग्रन्थ के भीष्म-पर्व में पाए जाने वाले आध्यात्मिक ज्ञान का योग-शास्त्र - श्रीमद् भगवद् गीतोपनिषद् में श्री कृष्ण और अर्जुन के संवाद से लिए गए विभूति योग नामक दसवें अध्याय की यहां पर समाप्ति होती है।

